P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-IV* ISSUE-I*September-2016
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

भारतीय वाङ्मय एवं साहित्यिक क्षेत्र में जैनाचार्यों की भूमिका तथा योगदान

सुरेन्द्र पाल सिंह
असिस्टेन्ट प्रोफेसर,
इतिहास विभाग,
बैसवारा पी0जी0 कालेज,
लालगंज,रायबरेली

सारांश

दिग्गज भारतीय विद्वानों ने संस्कृत के साथ ही साथ प्राकृत, अपभ्रंश, मराठी, बंगला, गुजराती, कन्नड़ आदि भाषाओं में भी उच्च कोटि के ग्रन्थों की रचना कर भारतीय वाड.मय को समृद्ध बनाया और उसका विस्तार किया। नाट्य साहित्य, छंद, शास्त्र, काव्य शास्त्र कोषकादि की भी रचनायें भारतीय विद्वानों ने की। अनेक उच्च कोटि के दार्शनिक ग्रन्थों का सृजन कर आध्यात्मिक क्षेत्र में भारत की विजय पताका विश्व में फहरायी। इसी प्रकार प्रकार जैनाचार्यो ने भी साहित्य की विभिन्न विधाओं पर लेखनी उठायी और उच्च कोटि के ग्रन्थों का सृजन कर भारतीय वाड.मय में महत्वपूर्ण योगदान दिया। जैनाचार्यो ने वैदिक एवं बौद्ध धर्म के आचार्यो की तरह संस्कृत, प्राकृत, कन्नड़, तेलगू, तमिल आदि विभिन्न भारतीय भाषाओं में उच्च कोटि के ग्रन्थों की रचना कर भारतीय साहित्य को समृद्ध बनाया तथा उसका विस्तार किया। साहित्य के निर्माण तथा कला के क्षेत्र में भी जैन धर्मानुयायियों ने अच्छा कार्य किया उन्होनें ताड़पत्र, भोजपत्र, कपड़े एवं कागज पर सहस्त्रों पोथियां लिखकर भारतीय ज्ञान की परम्परागत पोथी को सुरक्षित रखा। इस देश की भाषागत उन्नति में जैन मुनि सहायक रहे। ब्राहमण अपने धर्म ग्रन्थ संस्कृत में और बौद्ध पाली में लिखते थे किन्तु जैन मुनियों ने प्राकृत के अनेक रूपों का उपयोग किया और प्रत्येक काल और प्रत्येक क्षेत्र में जब जो भाषा चालू थी उसी के माध्यम से अपना प्रचार किया तथा प्राकृत के अनेक रूपों की उन्होनें सेवा की। प्राकृत भाषा में रचित उनका साहित्य बहुत विशाल है प्राकृत भाषा के विकास में जैन विद्वानों का प्रभाव महत्वपूर्ण रहा है। उस युग की बोलचाल की भाषाओं को उन्होनें साहित्यिक रूप प्रदान किया। कन्नड़ को प्राचीन साहित्यिक रूप देने वाले वही थे। इस भाषा का प्राचीनतम साहित्य जैनाचार्यो की कृति है। प्रारम्भिक साहित्य के निर्माण में उनका बड़ा योगदान रहा है। अतः भारतीय वाड.मय तथा साहित्यिक क्षेत्र में जैन आचार्यो के योगदान को नहीं भुलाया जा सकता।

मुख्य शब्द : वाड़मय, समृद्ध, भोजपत्र, ताड़पत्र, धर्मानुयायी

प्रस्तावना

भारतीय साहित्य का कलेवर अत्यन्त विशाल एवं असीमित है। वेद, वेदांग, ब्राह्मण ग्रन्थ, पुराण, षड्उदर्शन उपनिषद् आदि के अतिरिक्त वैदिक साहित्य पर विविध विद्वानों ने अनेक टीकाएं लिखीं तथा धर्म, दर्शन, व्याकरण, कथा साहित्य, राजनीतिशास्त्र, स्मृतियों आदि की रचना संस्कृत भाषा में की गई। संस्कृत के साथ ही साथ प्राकृत, अपभ्रंश, मराठी, बंगला, गुजराती, तेलगू, तमिल, कन्नड़ आदि भाषाओं में भी दिग्गज भारतीय विद्वानों ने उच्च कोटि के ग्रंथों की रचना कर भारतीय वाङ्मय को समृद्ध बनाया और उसका विस्तार किया। नाट्य साहित्य, छन्दशास्त्र, काव्यशास्त्र, कोष कादि की रचनाएं भारतीय विद्वानों ने की। अनेक उच्च कोटि के दार्शनिक ग्रन्थों का सृजन कर आध्यात्मिक क्षेत्र में भारत की विजय–पताका विश्व में इन्ही विद्वानों ने फहराई।

उद्देश्य

प्रस्तुत शोध में भारतीय वाड.मय तथा साहित्यिक क्षेत्र में जैन आचार्यो के योगदान का अध्ययन किया गया है।

साहित्य के क्षेत्र में जैनाचार्यो का योगदान

वैदिक एवं बौद्ध धर्म के आचार्यों के साथ–साथ जैनाचार्यों ने भी साहित्य की विभिन्न विधाओं पर लेखनी उठाई और उच्च कोटि के ग्रन्थों का सृजन कर भारतीय वाङ्मय में महत्वपूर्ण योगदान दिया। जैनाचार्यों ने संस्कृत, प्राकृत, कन्नड़, तेलगू, तमिल आदि विभिन्न भारतीय भाषाओं में उच्च कोटि के ग्रंथों की रचना कर भारतीय साहित्य को समृद्ध बनाया तथा उसका विस्तार किया। जैनों आगम ग्रंथ पैंतालीस है। इनमें ग्यारह अंग, बारह उपांग, दस

प्रकीर्णक, छः छेदसूत्र, चार मूल ग्रंथ और दो स्वतंत्र ग्रंथ सम्मिलित हैं इनके अतिरिक्त चौबीस पुराण है। मूल रूप से ये ग्रंथ अर्द्धमागधी भाषा में लिखे गये थे। परन्तु आज वे प्राकृत भाषा में हैं। इनका उत्तरकालीन रूप संस्कृत भाषा में है। ये रूपांतर श्वेताम्बरों के प्रयत्नों से ही सुरक्षित रहे। इन मूल ग्रंथों के पश्चात् अनेक टीकाएं लिखी गयीं।

अधिकांश जैन ग्रंथ प्राकृत भाषा में ही लिखे गये। इससे प्राकृत भाषा को प्रोत्साहन मिला और धर्म का प्रसार भी अधिक हुआ। जैन धर्म के कुछ ग्रन्थ अपभ्रंश भाषा में रचे गये। दक्षिण भारत में जैन धर्म के प्रचार और प्रसार के लिए दक्षिण भारत की भाषाओं में जैन सिद्धांत ग्रंथों की रचना की गई। कन्नड़ भाषा में जैन ग्रंथों की रचना कर उसे समृद्ध बनाया। तमिल साहित्य की श्री–वृद्धि भी जैन मुनियों एवं विद्वानों ने की। प्राचीन तमिल व्याकरण एवं प्राचीन तमिल कोष जैन विद्वानों ने ही लिखे है। तेलगू भाषा का साहित्य भी जैन विद्वानों एवं लेखकों ने समृद्ध बनाया।

मध्यकाल में जैनाचार्यो ने संस्कृत भाषा को अपनाया। इस भाषा में जैनाचार्यो ने वर्णनात्मक एवं दार्शनिक दोनों ही प्रकार के ग्रंथों की रचना की। जैन दर्शन और सिद्धान्तों का विवेचन संस्कृत भाषा में विरचित नवीन ग्रंथों में किया गया।

संस्कृत भाषा में विरचित जैन साहित्य

अनुयोगद्वार सूत्र में कहा गया है कि संस्कृत और प्राकृत ये दोनो ही श्रेष्ठ भाषाएं है और ऋषियों की भाषाएं है।[1] इसलिए आगम वेत्ताओं ने एक प्रकार से संस्कृत और प्राकृत दोनो ही भाषाओं की समकक्षता स्वीकार की। जैन अनुश्रुति के अनुसार प्राचीन साहित्य संस्कृत भाषा में था।[2] अतः सामान्य व्यक्ति उसे समझ नहीं सकते थे। इस कारण जनसाधारण के लिए एकादश अंगों की रचना की गयी।[3] एकादश अंगों की रचना प्राकृत भाषा में की गयी।[4] इतिहासकारों का मत है कि जैन परम्परा में आचार्य उमास्वाति ही सर्वप्रथम संस्कृत भाषा में लेखक है। तत्वार्थसूत्र पर सर्वप्रथम उमास्वाति का संस्कृत भाषा में संक्षिप्त भाष्य मिलता है। उसके अतिरिक्त छठी शताब्दी के आचार्य पूज्यपाद की सर्वार्थसिद्धि नामक संक्षिप्त किन्तु महत्वपूर्ण टीका मिलती है। अकलंक का राजवार्तिक भाष्य भी संस्कृत भाषा में मिलता है। विद्यानन्द द्वारा रचित श्लोकवार्तिक भी एक बहुत ही महत्वपूर्ण टीका है। ये विद्वान् दिगम्बर सम्प्रदाय के थे। श्वेताम्बर परम्परा में सिद्धसेन तथा हरिभद्र ने क्रमशः बृहत्काय एवं लघुकाय वृत्तियों की रचनाएं कीं। इन सम्पूर्ण टीकाओं में दार्शनिक दृष्टिकोण मुख्य रूप से प्रकट हुआ है।

दर्शन के क्षेत्र में योगदान

भारतीय दार्शनिक क्षेत्र में बौद्ध विद्वान् नागार्जुन ने एक महत्वपूर्ण क्रांति की। नागार्जुन की यह क्रांति बौद्ध दर्शन तक ही सीमित नहीं रही, अपितु, भारतवर्ष के सभी प्रमुख दर्शन उससे प्रभावित हुए बिना नहीं रह सके। सिद्धसेन दिवाकर तथा समन्तभद्र जैसे प्रखर प्रतिभा–सम्पन्न तार्किकों ने भी विशुद्ध दार्शनिक शैली का अनुसरण किया। सिद्धसेन दिवाकर केवल तार्किक ही नहीं थे, अपितु एक श्रेष्ठ कवि एवं उच्च कोटि के साहित्यकार भी थे। आगम साहित्य में बिखरे हुए अनेकान्त के बीजों को पल्लवित करने तथा जैन न्याय की परिभाषाओं को व्यवस्थित रूप प्रदान करने का प्रथम प्रयास उनके ग्रंथ न्यायावतार में उपलब्ध होता है। भगवान् महावीर स्वामी की स्तुति करते हुए सिद्धसेन ने विरोधी दृष्टिकोणों का भी सुन्दर समन्वय किया है।[5] वास्तव में सिद्धसेन जैन दर्शन के इतिहास में एक नवीन युग के प्रवर्तक माने जाते है।

श्वेताम्बर परम्परा में जो स्थान सिद्धसेन का है, वही स्थान दिगम्बर परम्परा में समन्तभद्र का है। वे भी एक उद्भट विद्वान थे। आचार्य समन्तभद्र ने देवागमस्तोत्र, युक्त्यनुशासन, स्वयंभूस्तोत्र आदि की रचना की। आधुनिक युग का सर्वप्रिय शब्द सर्वोदय है। उसका चामत्कारिक ढंग से सर्वप्रथम प्रयोग समन्तभद्र ने किया है।[6]

आचार्य हरिभद्र भी एक प्रतिभा–सम्पन्न विद्वान् थे। अनेकान्तजयपताका आदि उनके महत्वपूर्ण एवं प्रसिद्ध दार्शनिक ग्रंथ है। उपाध्याय यथोविजयजी ने संस्कृत साहित्य को अत्यधिक समृद्ध बनाया। उन्होने नव्य न्याय की शैली में अधिकारपूर्वक जैन न्याय के ग्रंथों की रचना की। दार्शनिक–मूर्धन्य अकलंक, विद्यानन्द, उद्योतनसूरि, जिनसेन, सिद्धर्षि, हेमचन्द्र, देवसूरि आदि अनेक प्रतिभा–सम्पन्न विद्वानों ने संस्कृत भाषा में दार्शनिक ग्रन्थों की रचना की। संक्षेप में दार्शनिक ग्रन्थों में न्यायावतार, युक्त्यनुशासन, आप्तमीमांसा, अनेकान्त–जयपताका, षड्दर्शनसमुच्चय, आप्तपरीक्षा, प्रमाण–परीक्षा, वादमहार्णव, प्रमेयकमलमार्तण्ड, न्यायकुमुदचन्द्र, स्याद्वादोपषिद, प्रमाणनयतत्वालोक, स्याद्वादरत्नाकर, रत्नाकरावतारिका, प्रमाण–मीमांसा आदि की गणना की जा सकती है।

टीका साहित्य

आगम साहित्य पर आचार्य हरिभद्र, शीलाङाचार्य, अभयचन्द्र, हेमचन्द्र, मलयगिरि आदि अनेक आचार्यों ने संस्कृत भाषा में टीका साहित्य का सृजन किया। जैनागम एवं जैन साहित्य के अतिरिक्त जैनेतर ग्रंथों पर भी जैनाचार्यो ने टीकाएं लिखी हैं, जो उनके उदार दृष्टिकोण एवं विशालहृदयता की स्पष्ट प्रतीक है।

व्याकरण और कोष ग्रन्थ

जैनेन्द्र, स्वयंभू, शाकटायन, शब्दाम्भोज भास्कर आदि संस्कृत व्याकरणों के निर्माण के पश्चात् आचार्य हेमचन्द्र ने सर्वांगपूर्ण सिद्धहेमशब्दानुशासन की रचना की। व्याकरण के अतिरिक्त कोष ग्रंथों की रचना भी संस्कृत भाषा में जैनाचार्यो द्वारा की गई। धनंजयनाममाला, अपवर्गनाममाला,अमरकोष,अभिधान चिन्तामणि, अनेकार्थ संग्रह, निघण्टुशेष आदि अनेक महत्वपूर्ण कोषग्रंथ साहित्य की अक्षय निधि है।

काव्य और कथा साहित्य

काव्य के क्षेत्र में भी जैनाचार्यो ने पद्यमय एवं गद्यमय अनेक उच्च कोटि के काव्य ग्रंथों का सृजन किया। यथा–पार्श्वाभ्युदय, द्विसंधानकाव्य, नेमिनिर्वाण महाकाव्य, यशस्तिलकचम्पू, तिलकमंजरी, भरतबाहुबली महाकाव्य, पदमानन्द महाकाव्य, धर्म शर्माभ्युदय महाकाव्य, यशोधरचरित्र, पाण्डव चरित्र आदि। कथा साहित्य के अन्तर्गत उपमितिभवप्रपंचकथा, कुवलयमाला, आराधना

कथा कोष, आख्यान मणिकोश, कथारत्न सागर, दानकल्पद्रुम, सभ्यकत्वकौमुदी, कथारत्नाकर आदि महत्वपूर्ण ग्रंथ है।

छन्द और अलंकार ग्रन्थ

इस क्षेत्र में भी जैनाचार्यो का योगदान किसी से कम नहीं रहा। आचार्य हेमचंद्र रचित छन्दोऽनुशासन एक महत्वपूर्ण रचना है। यह ग्रन्थ आठ अध्यायों में विभक्त है। अपने से पूर्व जितने भी छन्द संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश आदि भाषाओं में प्रचलित थे, उन सबका समावेश इस ग्रंथ में किया गया है। छन्दो के लक्षण संस्कृत भाषा में लिखे हैं। छन्दों के शास्त्रीय लक्षणों एवं उदाहरणों के लिए यह रचना एक महाकोश के समान है। इनके अतिरिक्त नेमि के पुत्र बाग्भट्ट रचित पांच अध्यायों में छन्दोऽनुशासन उपलब्ध होता है। अमरचन्द्रकृत छन्दरत्नावलि,रत्नमंजूषा आदी अनेक ग्रन्थ मिलते है। काव्यानुसार अलंकार चिंतामणि, अलंकार चूड़मणि, कविशिखा,वाग्भट्टालंकार, कविकल्पलता, अलंकार प्रबोध आदि अलंकार साहित्य के महत्वपूर्ण ग्रंथ है।

नाट्य साहित्य

आचार्य हेमचन्द्र के शिष्य एक प्रसिद्ध नाटककार हुए है। ऐसा कहा जाता है कि उन्होने 100 नाटकों की रचना की थी। निर्भयभीम, व्यायोग,नलविलास, कौमुदीमित्रानन्द, रघुविलास, रोहिणीमृगांक, वनमाला आदि उनके प्रमुख नाटक है।

तेरहवीं शताब्दी में हस्तीमल नामक जैन विद्वान् का आविर्भाव हुआ। उन्होने विक्रान्त कौरव, सुभद्रा, मैथिली कल्याण, अंजनापवनजय, उदयनराज, भरतराज, अर्जुनराज, और मेघेश्वर आदि अनेक महत्वपूर्ण नाटकों की रचना की। जिनप्रभसूरि के शिष्य रामभद्र ने छः अंकों के नाटक रौहिणेय की रचना की। इसी प्रकार यशपाल का मोहराजपराजय, जयसूरिकृत हम्मीरमदमर्दन, रत्नशेखर कृत प्रबोधचन्द्रोदय, मेघ प्रभाचार्य कृत धर्माभ्युदय प्रमुख नाटक हैं। इनके अतिरिक्त सत्यहरिश्चन्द्र, यदुविलास, मल्लिका मकरंद, रोहिणी मृगांक, चन्द्रलेखा विजय, मानमुद्राभंजन, द्रौपदीस्वयंर आदि नाटकों की रचना जैनाचार्यो ने की तथा संस्कृत साहित्य को समृद्ध बनाया।

ज्योतिष, आयुर्वेद तथा नीति ग्रन्थ

जैनाचार्यों ने ज्योतिष, आयुर्वेद तथा नीतिशास्त्र पर भी महत्वपूर्ण ग्रन्थों की रचना की और भारतीय वाङ्मय की अभिवृद्धि में महत्वपूर्ण योगदान दिया। सिद्धांतशेखर,ज्योतिष रत्नाकर, गणित–तिलक, भुवनदीपक, आरम्भसिद्धि–नारचन्द्र, ज्योतिषसार आदि प्रसिद्ध ज्योतिष ग्रंथों की रचना जैनाचार्यो द्वारा की गई।

आयुर्वेद विषयक ग्रंथों में भी माणिकचन्द्र रचित रसावतार, मेरूतुंग रचित रसायन प्रकरण, श्रीकण्टसूरिकृत हितोपदेश, शुभचन्द्र रचित जीवकतंत्र, गंगादाससूरि रचित वैद्यसार संग्रह, हेमाद्रिकृत लक्ष्मण प्रकाश आदि अनेक प्रसिद्ध रचनाएं हैं।

अपभ्रंश एवं प्राकृत भाषाओं में जैन साहित्य

भाषा एवं साहित्य दोनो ही दृष्टियों से अपभ्रंश का महत्व कम नहीं हैं हिन्दी साहित्य का जो प्रारम्भिक रूप है, वह अपभ्रंश में ही है। अपभ्रंश को हिन्दी साहित्य की जननी कहना उचित ही हैं अपभ्रंश भाषा में भी जैनाचार्यो ने अनेक महत्वपूर्ण ग्रंथों की रचना की। इन रचनाओं में पउमचरिउ, रिठनेमिचरिउ, महापुराण, णाय कुमारचरिउ, जसहरचरिउ, करकंडुचरिउ, णेमिणाहचरिउ, पउमसिरीचरिउ, सनत्कुमारचरित एवं सुंदसणचरिउ आदि प्रकाशित महत्वपूर्ण ग्रंथ हैं।

इसके साथ ही प्राकृत भाषा में विचरित जैन कथा साहित्य का भी महत्वपूर्ण स्थाना है। मूल आगम साहित्य में कथा साहित्य का वर्गीकरण अर्थकथा, धर्मकता और कामकथा के रूप में किया गया है। आचार्य हरिभद्र ने विषय की दृष्टि से अर्थकथा, कामकथा, धर्मकथा और मिश्रकथा, ये चार भेद किये हैं।[7] जैनाचार्यो ने महत्वपूर्ण कथा ग्रंथों की भी रचनाएं की। इनमें विमलसूरि का पउमचरिय और हरिवंसचरिय,शीलांकाचार्य का चउप्पण्ण महापुरिसचरियं, गुणपालमुनि का जम्बूचरियं, धनेश्वर का सुरसुन्दरीचरियं, नेमिचन्द्र का रयणचूड़रायचरियं, गुणचन्द्रमणि का पासनाहचरियं और महावीरचरिय, देवेन्द्रसूरि का सुंदरणचरिय और कण्हचरिय, मानतुंगसूरि का जयन्तीप्रकरण, चन्द्रभामहत्तरि का चन्द्रकेवलीचरिय, देवचन्द्रसूरि का संतिनाहचरिय, शान्तिसूरि का पुहबीचन्दचरिय, मलधारी हेमचन्द्र का नेमिनाहचरिय, श्रीचन्द्र का मुणिसुव्वयसामिचरिय, देवेन्द्रसूरि के शिष्य श्रीचन्द्रसूरि का सणंकुमारचरिय, सोप्रभसूरि का सुमतिनाहचरिय, नेमिचन्द्रसूरि का अनन्तनाहचरिय एवं रत्नप्रभ का नेमिनाहचरिय एवं रत्नप्रभ का नेमिनाहचरिय प्रसिद्ध चरितात्मक काव्य ग्रंथ हैं।[8] इनमें कथा और आख्यानिका का अपूर्व सम्मिश्रण हुआ है। इनमें बुद्धि–माहात्म्य, लौकिक आचार–विचार, सामाजिक परिस्थिति और राजनैतिक वातावरण का सुन्दर चित्रण हुआ है। इन चरित ग्रंथा में ''कथारस'' की अपेक्षा ''चरित'' की ही प्रधानता है। धार्मिक सुधार के कारण और समाज की विश्वासपात्रता को प्राप्त कर जैनों ने सबसे बड़ा जोर दिया साहित्य के निर्माण पर। कला के क्षेत्र में भी जैन धर्मानुयायियों ने अच्छा कार्य किया। उन्होने ताड़पत्र, भोजपत्र, कपड़े एवं कागज पर सहस्त्रों पोथियां लिखकर भारतीय ज्ञान की परम्परागत पोथी को सुरक्षित रखा।[9] श्री रामधरी सिंह दिनकर लिखते है कि ''इस देश की भाषागत उन्नति में जैन मुनि सहायक रहे हैं। ब्राह्मण अपने धर्मग्रंथ संस्कृत में और बौद्ध पालि में लिखते थे, किन्तु जैन मुनियों ने प्राकृत के अनेक रूपों का उपयोग किया और प्रत्येक काल एवं प्रत्येक क्षेत्र में जब जो भाषा चालू थी, जैनों ने उसी के माध्यम से अपना प्रचार किया। इस प्रकार प्राकृत के अनेक रूपों की उन्होने सेवा की। महावीर ने अर्धमागधी को इसलिए चुना था ताकि मागधी और शौरसेनी दोनो भाषाओं के लोग उनका उपदेश समझ सकें। बाद में ये उपदेश लिख भी लिये गये और उन्हीं के लेखन में हम धर्ममागधी भाषा का नमूना पाते है। हिन्दी, गुजराती, मराठी आदि भाषाओं के जन्म लेने के पूर्व इन प्रांतों में जो भाषा प्रचलित थी, उसमें जैनों का विशाल साहित्य है। व्याकरण, छन्द शास्त्र, कोष और गणित पर भी संस्कृत में जैनाचार्यो के लिखे ग्रन्थ हैं।[10]

P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-IV* ISSUE-I*September-2016
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

निष्कर्ष

जैनाचार्यों ने अपने धर्म प्रचार, ज्ञान संचय एवं रचना के हेतु विभिन्न स्थलों पर विभिन्न कालों की तत्कालीन भाषाओं का प्रयोग किया। प्राकृत भाषा में रचित उनका साहित्य बहुत विशाल है। इस प्रकार प्राकृत भाषा के विकास में जैन विद्वानों का प्रभाव महत्वपूर्ण रहा है। उस युग की बोलचाल की भाषाओ को उन्होंने साहित्यिक रूप प्रदान किया। कन्नड़ को प्राचीन साहित्यिक रूप देने वाले वही थे। इस भाषा का प्रचीनतम साहित्य जैनाचार्यों की ही कृति है। प्रारम्भिक साहित्य के निर्माण में इनका बड़ा योगदान रहा है। संस्कृत, प्राकृत तथा आधुनिक हिन्दी, मराठी एवं गुजराती के मध्यवर्ती रूप अपभ्रंश में अनेक जैन ग्रन्थ उपलबध हुए है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. अनुयोग द्वारसूत्र
2. हीर प्रश्न, तृतीय उल्लास, हीरविजय सूरि
3. विशेषावश्यक भाष्य, गाथा, 550
4. दशवैकालिक टीका
5. तृतीय द्वार्विंशिका, 8
6. रत्नकरण्ड श्रावकाचार, प्रस्तावना पृष्ठ 147
7. दशवैकालिक हरिभद्रीय वृत्ति, गाथा 188, पृष्ठ 212
8. मरूधर–केशरी–अभिनन्दन ग्रन्थ, खण्ड 4, पृष्ठ 194
9. श्री वाचस्पति गैरोला, भारतीय चित्रकला, पृष्ठ 113
10. श्री रामधारी सिंह दिनकर, 'संस्कृति के चार अध्याय', पृ0 145–46